JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

उपनिषदों मे ंयोग विमर्श

डॉ0 शक्ति पाण्डेय लेखिका

उपनिषदो ं में योग वैदिक साहित्य मे ं उपनिषदो ं का महत्त्वपू र्ा स्थान है। सभी उपनिषदे ं ब्रह्मविद्या का प्रतिपादन करती है। ब्रह्माण्ड के रहस्योद्घाटन में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रत्यके उपनिषद् किसी न किसी वदे से संबद्ध है। इतने विस्तृत समुद्र से मोती के समान योग विद्या उनमें बिखरी हुई 'मुक्तोपनिषद' के अनुसार उपनिषदो ं की संख्या 108 के लगभग मानी गयी है। इसमें कहीं–कहीं योग का वर्णन विशेष रूप से प्राप्त होता है, जिनमे ं मुख्य उपनिषद् निम्न है–

1– अद्वयतारकोपनिषद्

2– अमृतबिन्दु उपनिषद्

3– अमृतानापे निषद्

4– तेजोबिन्दुपनिषद्

5–मुक्ति उपनिषद्

6–त्रिशिखब्रह्मणोपनिषद

7– दर्शनापे निषद

8– ध्यानबिन्दुपनिषद्

9– नादबिन्दुपनिषद्

10– पाशुपतब्रह्म मणोपनिषद्

11– ब्रहमविद्योपनिषद्

12– मण्डलब्रहमणोपनिषद्

13– महावाक्योपनिषद्

14– योगकुण्डल्युपनिद्

15–योगचूड़ामण्युपनिषद्

16– शाण्डिल्युपनिषद्

17–हंसोपनिषद्

18– योगतत्वोपनिषद्

19– योगशिखोपनिषद्

20–योगराजोपनिषद्

21– वराहोपनिषद्। इत्यादि

श्वेताम्बर उपनिषद में योग विद्या :–

''तिरुतंत्र स्थाप्य सम ं शरीरं द्वदीन्द्रियाणि मनसा सनिवेश्य। ब्रहनोडुपने प्रतरेत विद्वान स्त्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि।।[1]''

शरीर के तीन अंगो ं (छाती, गर्दन और सिर) को सीधा रखकर इन्द्रियो ं को मन के साथ हृदय में प्रवशे ा करके, ओंकार की नौका पर सवार हाके र मय के लाने वाल ेसारे प्रवाहों से पार उतर जाये।

''प्राणान ग्रपीडयेह, संयुक्तचेष्टः क्षीणे प्राणे नासिकायोचवहीत दुष्टाक्षयुक्तभिव वाहमेन विद्वान मनो धारयेताप्रमत्तः[2]।।''

शरीर की सारी चेष्टाओं को वश मे ं करके प्राणो ं को रोके ं और प्राण के क्षीण होने पर नासिका से श्वास ले। सचेत सारथि जैस–े घोड़ो ं की चंचलता को रोकता है, इस प्रकार अप्रमत्त होकर मन को रोके।

''समे शुचौ शर्करावाद्विबालुकाविवर्जिते शब्दजलाश्रयादिभिः। मनोऽनुकूले न तु चक्षुपीडने गुहा निवाताश्रयणे प्रयोजयेत[3]।।

एसे ेस्थान पर योग का अभ्यास करे ं जो सम है, शुद्ध है, कंकण, बालू और अग्नि से रहित है, जो शब्द जलाशय और लता आदि से मन के अनुकूल है, और आंखो को पीड़ा देन ेवाला नहीं है, एकान्त है और वायु के झोको ं से रहित है।

''नीहारधूमार्कानिलानलानां खद्योतविधत्स्फटिकशशीमाम्। एतानि रूपाणि पुरःसराणि ब्रह्मण्यामिव्यक्तिकराणि योगे।।'' जब अभ्यास का प्रभाव हाने ेलगता है, तब पहल ेयह रूप दिखते

हैं– कुहरा, धुंआ, सूर्य, वायु, अग्नि, जुगनू, विद्यतु , बिल्लौर, और चन्द्र, यह सब रूप दिखकर जब शान्त हो जाते हैं, तब ब्रहम का प्रकाश होता है।

''पृथ्व्यप्तेजोऽनिलखे समुत्थिते पञ्यात्मके योगगुणे प्रवृत्ते[4]। न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्।।'' जब पृथ्वी, जल, तेल, वायु और आकाश प्रकट हाते ` हैं, अर्थात पाँचो तत्वो ं का जय हा ` जाता है, तब फिर योगी के लिये न रोग है, न जरा है, न दुःख है, क्योकि उसन ` वह शरीर पा लिया है जो यागे की अग्नि से बना है।

''लघुत्वमारोग्ये यमलोलुपत्वं वर्णप्रसादं खरसौण्ठवं च। गन्धः शुभो मूत्रपुरीषमल्पं यागे प्रवृत्ति प्रथमां वदन्ति।।

योग का पहला फल यह कहते हैं–शरीर हल्का हा ` जाता है, आरोग्य रहता है, विषयो ं की लालसा मिट जाती है, कान्ति बढ़ जाती है, स्वर मधुर हो जाता है। गन्ध शुद्ध हाते ा है और मल–मूत्र थोड़ा हाते ा है।

''यथैव बिम्बं मृदयोपलिप्तं तेजोमयं भ्राजते तत् सुधान्तम्।
तद्वाऽऽत्यत्वं प्रसमीङ्य देही एकः कृतार्थो भवते पीतशोकः।।

इसके पीछे उस ` आत्मा के शुद्ध स्वरूप का साक्षात् हाते ा है। जैस ` वह रत्न जो मिट्टी से लिपटा हुआ होता है, जब धोया जाता है तो फिर तेजमय होकर चमकता है, इस प्रकार देही (पुरूष) फिर आत्मतत्व (आत्मा के असली स्वरूप) को दखे ाकर शोक स ` पार हुआ कतृ ार्थ हो जाता है।

''यदाऽऽत्मतप्येन तु बह्व मतत्वं दीपोपमेनहे युक्तः प्रपश्येत अजं ध्रुवं सर्वक्तवैर्विशुद्धं ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः[4]।।'' फिर जब योगयुक्त होकर दीपक के तुल्य आत्मतत्व से ब्रहमतत्व को देखता है, जो अजन्मा, अटल (कूठस्थ) और सब तत्वो ं से विशुद्ध है, तब उस देव (शुद्ध परमात्मातत्व) को जानकर सब फाँसो से छूट जाता है। कठोपनिषद मे ं योग विद्याः–

''यदा पञ्चावतिष्ठन्त ` ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्विश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्[5]।।

तां यागे मिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्। अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ[6]।।

जब पाँचा` ज्ञानेन्द्रियाँ मन क` साथ स्थिर हो जाती है (प्रत्याहार द्वारा अन्तर्मुख हो जाती है) और बुद्धि भी चेष्टा रहित हा` जाती है। (चिप्त की सब वृत्तियो ं का निरोध हो जाता है) उसको परमगति (सबसे ऊँची अवस्था) कहते हैं। उसी को योग मानते हैं, जो इन्द्रियो ं की निश्चल धारणा है। उस समय वह (योगी) प्रमाद से (अपने स्वरूप को भूला हुआ जो वृत्तिस्वरूप प्रतीत हा` रहा था उससे) रहित हाते ा है अर्थात् शुद्ध परमात्मस्वरूप में अवस्थित होता है, क्योकि योग प्रभव और अप्यय (निरोध के संस्कारों के प्रादुर्भाव, अर्थात प्रकट हाने` और व्युत्थान के संस्कारों के अभिभव, अर्थात दबने का स्थान ह)ै

''नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा। अस्तीति ब्रुवतोऽन्यत्र कथं तदुपलभ्यते[7]।।

अस्तीत्येवोपलब्धव्यस्तत्वभावने चोभयोः। अस्तीत्येवोपलब्धस्थ तत्त्वभावः प्रसीदति[8]।। वह (आत्मा) न वाणी से, न मन से, न आँख से पाया जा सकता है। 'वह है' इस रूप से और तत्वस्वरूप से उसको जानना चाहिए। जब 'वह है' इस प्रकार अनुभव कर लिया है, तब उसका तत्व स्वरूप स्पष्ट हो जाता है।

विशिष्ट रूप से उसका 'वह है' करक` और शुद्ध स्वरूप मे ं उसका तत्वभाव अनुभव करते हैं।

'त्रिशिखिहनणोपनिषद में योग दर्शन के समान अरतेय ब्रह्मचर्य आदि की चर्चा यम के अन्तर्गत ही की गयी है।

'अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्य दयार्जवम्।
क्षमा धृतिमिताहारं शैचं यमा दशाः[9]।।

'छान्दोम्योपनिषद' मे ं'प्राण' के महत्व पर चर्चा की गयी है। 'सर्वाणि ह वा इमानि भूतानि प्राणयोभिसंविशन्ति'' अर्थात सभी भूत प्राण से ही उत्पन्न हाते` हैं, और प्राण में ही लीन होते हैं। 'जावालोपनिषद' में 'धारणा' के विषय में बताया गया कि– ''सर्वकारणमक्तं'' निरूप्यचेतनम्, साक्षादात्मानि सम्पू र्ा धारयेत्प्राणनेन तू' (8/9) ज्ञान प्रसाद के द्वारा विशुद्ध सत्व हाके र ध्यान करता हुआ आत्मा को देख।

'बृहदारण्यकोपनिषद' में कहा गया है– 'आत्मा व अरे दृष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितत्वः' आत्मा का दर्शन, श्रवण, मनन और निदिध्यासन करना चाहिए।

'यागे तात्वोपनिषद मे मोक्ष के लिए ज्ञान एवं योग दाने ो ं की आवश्यकता को स्वीकार किया गया है–

'योगहीनं कथं ज्ञानं मोक्षदं भवति ध्रुवम्।

योगोऽपि ज्ञानहीस्तु न क्षमो मोक्ष कर्माणि[10]।।

योग के अभाव में ज्ञान ध्रुव मोक्ष देन ` वाला नहीं हा ` सकता है। योग के चार प्रकार निर्दिशिष्ट किये गये हैं–लय योग, मंत्रयोग, हठयोग, और राजयोग। इन संदर्भो क ` साथ–साथ अष्टांग योग का भी सविस्तार वर्णन प्राप्त हाते ा है। योगशिखोपनिषद में मंत्र, लय हठ और राज योग चतुर्विध योग का वर्णन है[11]। कुण्डलिनचालन, नादानुसंधान, जय कुम्भक बधं ा आदि को अभ्यास का उल्लेख मिलता है। प्रणयान को समान करना योग चतुष्टय कहा गया है। 'अमृत बिंदु उपनिषद' में छः अंगों का वर्णन मिलता है– प्रत्याहार, ध्वनि, प्राणायाम, धारणा तक ं और समाधि योग[12]। इसी प्रकार 'क्षुरिकोपनिषद' मे ं यम–नियम–देश आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान, समाधि का वर्णन है। 'तजोबिदं ुपनिषद' यम, नियम, देश काल आसन मूलबधं ा देहसाम्य, दृविस्थति, प्राणसंयम, आत्मध्याम समाधि आदि का उल्लेख करता है।

विषय की सीमा को दृष्टिगत करते हुए सम्पणू ं उपनिषदो ं का उल्लखे ा करना सम्भव नहीं है। विशाल उपनिषद् राशि में सर्वत्र योग के दर्शन प्राप्त होते हैं। उपनिषदां ` में सभी यौगिक क्रियाएं, योग से सम्बन्धित संकल्पनाओं का दीपपुंज ज्वालायभान है। उपनिषद काल में योग विद्या का ज्ञान आध्यात्म साधन रूप में विद्यमान था। वर्तमान काल में उपनिषदो ं के संदर्भ में जो भी अव्यवहारिका मिलती है, वह सब मानवता के विरूद्ध कार्य करने वालो ं के द्वारा फैलायी गयी भ्रांतियां हैं। उपनिषद् मानव जाति के उत्थान की रचना है, जो अध्यात्म मार्ग का चयन करती है और वह मार्ग यौगिक अभ्यास के पथ से गुजरता है। उपनिषदां ` के अध्ययन के पश्चात इस तथ्य की पुष्टि हाते ी है कि योग का ज्ञान उपनिषद काल में था।

की वर्ड–

भारतीय उपनिषदां ` में योग चिन्तन, उपनिषदो ं मे ं योग का महत्त्व।

(1) श्वेताश्वेतोपनिषद्, चौखम्भा प्रकाश 2002, 17

(2) वही, 20

(3) वही : 21

(4) वही, 22

(5) कठोपनिषद् व्याख्याकार आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन इलाहाबाद, 2019, अद्वितीय वल्ली 13. 14

(6) वही, 20

(7) वही : 24

(8) वही, 25

(9) छन्दोग्योपनिषद्, गीताप्रेस गोरखपुर, 19, 20, 21

(10) ईशादि नौ उपनिषद्, गीता प्रेस गोरखपुर, 25

(11) योग दर्शन महर्षि पतञ्जलिकृत, गीता प्रसे गोरखपुर, 5, 8, 9, 10

(12) योगवशिष्ठ गीता पेस्र गोरखपुर, 2009, 17, 18